



Original Article

भारतीय रजतपट पर जनजातीय एवं लोकसंस्कृति का चित्रण

डॉ. सुशील सोमवंशी

सहायक प्राध्यापक हिंदी

शासकीय कमलाराजा कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर मध्य प्रदेश

Manuscript ID:

IJAAR-C130353

ISSN: 2347-7075

Impact Factor – 8.141

Volume – 13

Issue – 3

January – February 2026

Pp. 265 – 273

Submitted: 02 Feb. 2026

Revised: 11 Feb. 2026

Accepted: 15 Feb. 2026

Published: 28 Feb. 2026

Corresponding Author:

डॉ. सुशील सोमवंशी

Quick Response Code:



Website: <https://ijaar.co.in/>



DOI: 10.5281/zenodo.22786536

DOI Link:

<https://doi.org/10.5281/zenodo.22786536>



Creative Commons



सार:

भारतीय चलचित्र केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, समाज और संस्कृति का सशक्त प्रलेख भी है। भारत की आत्मा गाँवों, जनजातियों और लोकपरंपराओं में निवास करती है। यह शोध पत्र भारतीय चलचित्र में जनजातीय जीवन और लोकसंस्कृति के चित्रण का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसमें यह अध्ययन करने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार हिन्दी एवं क्षेत्रीय चलचित्र ने लोकगीत, लोकनृत्य, परंपराएँ, वेशभूषा, आस्थाएँ तथा जनजातीय संघर्षों को प्रदर्शित किया है। साथ ही यह भी देखा गया है कि फिल्म में यह चित्रण यथार्थपरक रहा है या रोमानी और बाज़ारू दृष्टि से प्रेरित।

मुख्य शब्द: भारतीय फिल्म, जनजातीय जीवन, लोकसंस्कृति, लोकगीत, सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व, आदिवासी विमर्श

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.

How to cite this article:

डॉ. सुशील सोमवंशी. (2026). भारतीय रजतपट पर जनजातीय एवं लोकसंस्कृति का चित्रण. *International Journal of Advance and Applied Research*, 13(3), 265 – 273. <https://doi.org/10.5281/zenodo.22786536>

प्रस्तावना:

भारत विविधताओं का देश है, जहाँ सैकड़ों जनजातियाँ और असंख्य लोकपरंपराएँ एक साथ मिलजुल कर रहती हैं। भारतीय फिल्म ने प्रारंभ से ही लोकजीवन से कथानक ग्रहण किए हैं। शुरुआती दौर में दो बीघा ज़मीन, मदर

इंडिया जैसी फिल्मों में ग्रामीण यथार्थ दिखता है, वहीं आगे चलकर गुड्डी, नया दौर, सुजाता, जंगल बुक (हिंदी प्रभाव) आदिवासी केन्द्रित फिल्मों में जनजातीय और लोकतत्व प्रदर्शित होते हैं।



फिल्म के माध्यम से लोकसंस्कृति राष्ट्रीय और वैश्विक मंच पर पहुँचती है, किन्तु कई बार यह प्रस्तुति वास्तविकता से अधिक कल्पनात्मक हो जाती है। यही द्वंद्व, शोध का मूल आधार है।

उद्देश्य:

भारतीय रजतपट में जनजातीय एवं लोकसंस्कृति के स्वरूपों का अध्ययन करना, लोकगीत, लोकनृत्य और प्रथाओं के फिल्म ई उपयोग का विश्लेषण, जनजातीय जीवन के यथार्थ एवं रोमानीकरण की तुलना, यह भी देखना कि फिल्म ने जनजातीय समाज की समस्याओं को किस स्तर तक स्वर दिया गया है।

द्धति:

यह शोध गुणात्मक पद्धति पर आधारित है। चयनित फिल्मों का पाठ विश्लेषण, गीत, दृश्य, पात्र और संवादों का सांस्कृतिक अध्ययन, पुस्तकों, लेखों एवं समीक्षाओं का संदर्भ, लोकसंस्कृति सिद्धांत एवं सांस्कृतिक अध्ययन दृष्टिकोण के आधार पर है।

लोकसंस्कृति और आदिवासी जीवन:

लोकसंस्कृति जनजातीय जीवन की आत्मा होती है, जिसमें लोकगीत, लोककथाएँ, लोकपर्व, नृत्य, वेशभूषा, देवी-देवता और जीवनशैली सम्मिलित होती हैं। जनजातीय संस्कृति प्रकृति-केन्द्रित, सामूहिक और पारंपरिक होती है। भारतीय चलचित्रों ने इन तत्वों को कभी सौंदर्यात्मक पृष्ठभूमि के रूप में, तो कभी सामाजिक संघर्ष के रूप में दिखाया है।

फिल्मों में लोकसंस्कृति:

लोकगीत और लोकनृत्य:

नदिया के पार, गंगा जमुना, मदर इंडिया, लगान, पीके, पद्मावत जैसे सिनेमा में लोकधुनों, वाद्ययंत्रों और नृत्य शैलियों का प्रभाव दिखता है। ददरिया, बिरहा, आल्हा, गरबा, घूमर, करमा जैसे लोकनृत्य फिल्मों को भारतीयता प्रदान करते हैं।

नदिया के पार – “कौन दिसा में लेके चला रे बटोहिया”

गीत की शुरुआत ग्राम्य स्त्री के प्रश्न से होती है, जिसमें वह पथिक से दिशा पूछती है। यह प्रश्न-उत्तर शैली पूर्वांचल के लोकगीतों की पहचान है और यात्रा तथा विरह भाव को प्रदर्शित करती है।

शोध उपयोग: लोकप्रश्न परंपरा, पथिक संवाद, विरह भाव

नदिया के पार – “जोगी जी धीरे धीरे”

गीत आरंभ में “धीमे-धीमे आने”¹ के आग्रह के साथ शुरू होता है, जिसमें लज्जा, मधुरता और स्त्री लोकभाव निहित है। यह विवाह संस्कारों से जुड़े लोकगीतों की शैली को उद्धाटित करता है।

शोध उपयोग: स्त्री लोकपरंपरा, संस्कार गीत, कोमल संबोधन

गंगा जमुना – “नैन लड़े से लागे”

गीत का प्रारंभ आँखों के मिलन और सहज प्रेमानुभूति से होता है। भाषा अवधी है, लय ठेठ लोकधुन पर आधारित है।

शोध उपयोग: अवधी लोकभाषा, प्रेम लोकगीत, भावात्मक सरलता

मदर इंडिया – “होली आई रे कन्हाई”

गीत का प्रारंभ होली के आगमन की घोषणा से होता है। सामूहिक मस्ती, रंग, ढोल-नगाड़ों की गूँज और कृषक जीवन की झलक मिलती है।

शोध उपयोग: पर्व आधारित लोकगीत, सामूहिक संस्कृति



लगान – “घनन घनन”

गीत की शुरुआत बादलों की गड़गड़ाहट और बारिश के संकेतों से होती है। यह वर्षा-गीत परंपरा से जुड़ा है, जिसमें प्रकृति को मानवीय रूप में देखा गया है।

शोध उपयोग: ऋतु लोकगीत, प्रकृति-केन्द्रित संस्कृति

पीके – “लव इज वेस्ट ऑफ टाइम”

गीत का आरंभ लोकलय पर आधारित चुटीली पंक्तियों से होता है, जिसमें प्यार को समय की बरबादी कहकर लोकव्यंग्य रचा गया है।

शोध उपयोग: लोकव्यंग्य, समकालीन लोकधुन

पद्मावत – “घूमर”

गीत राजस्थानी लोकगौरव और नारी गरिमा के मंगलाचरणात्मक भाव प्रदर्शित करता है। यह शुद्ध घूमर की भूमि तैयार करता है।

शोध उपयोग: राजस्थानी लोकनृत्य, सांस्कृतिक गौरव

इन गीतों की प्रारम्भिक पंक्तियाँ प्रायः लोकप्रश्न, ऋतु-संकेत, पर्वघोषणा या मंगलाचरण से होती हैं, जो भारतीय लोकगीत परंपरा की मूल संरचना है। स्पष्ट होता है कि भारतीय फिल्म ने लोकगीतों की आत्मा को बनाए रखते हुए उन्हें दृश्य माध्यम में ढाला है।

ग्रामीण जीवन में परंपराएँ

हिन्दी फिल्म में मेले, विवाह, ऋतु पर्व, फसल उत्सव और लोकविश्वासों को व्यापक स्थान मिला है। ये दृश्य भारतीय समाज की सांस्कृतिक धरोहर को रेखांकित करते हैं।

मदर इंडिया (1957)

लोक का विश्वास:

धरती को माता मानने की परंपरा, वर्षा, फसल और भाग्य को दैवीय शक्तियों से जोड़ना, नारी को त्याग और धर्म की प्रतीक मानना।

लोकविश्वास-आधारित गीत: “होली आई रे कन्हई”

लोकविश्वास: होली केवल पर्व नहीं, बल्कि बुराई पर अच्छाई की विजय और सामूहिक शुद्धि का प्रतीक है।

“दुख भरे दिन बीते रे भैया”

लोकविश्वास: श्रम, धैर्य और ईश्वर-आस्था से जीवन बदल जाता है।

शोध उपयोग: कृषक समाज, भूमि-पूजा, पर्व आधारित लोकमान्यता।

नदिया के पार (1982):

लोकविश्वास:

विवाह को पवित्र संस्कार मानना, स्त्री लज्जा, सास-बहू संबंध, ग्राम देवता की आस्था, नदी को जीवन-साक्षी मानने की परंपरा।

लोकविश्वास-आधारित गीत: “जोगी जी धीरे धीरे”

लोकविश्वास: विवाह गीतों में सौम्यता और शुभता मुख्य मानी जाती है।

“कौन दिसा में लेके चला रे बटोहिया”

लोकविश्वास: पथिक से दिशा पूछना शुभ-अशुभ संकेतों से जुड़ा होता है।

शोध उपयोग: विवाह लोकरीति, नदी-संस्कृति, स्त्री लोकपरंपरा।



लगान (2001):

लोकविश्वास:

वर्षा को ईश्वर का वरदान मानना, सामूहिक प्रार्थना और भजन परंपरा, भाग्य, परिश्रम और दैवी कृपा का संबंध स्थापित करना।

लोकविश्वास-आधारित गीत: “घनन घनन”

लोकविश्वास: वर्षा-आह्वान गीत

“ओ पालनहारे”

लोकविश्वास: ईश्वर संकटमोचक और पालनहार है।

शोध उपयोग: वर्षा-लोकविश्वास, कृषक धर्मबोध, सामूहिक भक्ति

सुहाग / सावन भादो / नया दौर (ग्रामीण परंपरा प्रधान फ़िल्में):

लोकविश्वास:

सावन को प्रेम का महीना मानना, मेले को देवकृपा और सामाजिक मेल का केंद्र मानना, बैल, कुआँ, पीपल, बरगद जैसे प्रतीकों में आस्था रखना।

लोकविश्वास-आधारित गीत: सावन/झूला गीत, मेला गीत, श्रम गीत इत्यादि।

शोध उपयोग: ऋतु लोकविश्वास, वृक्ष पूजा, पशु-संस्कृति

पद्मावत (2018):

लोकविश्वास:

नारी को कुल-गरिमा का प्रतीक मानना, अग्नि को शुद्धि का माध्यम मानना, देवी-आराधना और मंगलाचरण, परंपरा

लोकविश्वास-आधारित गीत: “घूमर”

लोकविश्वास: घूमर केवल नृत्य नहीं, देवी-पूजन और नारी-संस्कार से जुड़ी विधा है।

शोध उपयोग: राजस्थानी लोकआस्था, नारी गरिमा, मंगल परंपरा

गंगा जमुना (1961):

लोकविश्वास:

नदी को माता और साक्षी मानना, भाग्य, पाप-पुण्य और पुनर्जन्म की धारणा को लेकर चलना।

लोकविश्वास-आधारित गीत: “नैन लड़े से लागे”

लोकविश्वास: प्रेम को पूर्वजन्म से जुड़ा मानने की लोकधारणा, श्रम और नदी-जीवन से जुड़े गीत

शोध उपयोग: नदी-संस्कृति, कर्म विश्वास, लोकनैतिकता

हिन्दी फिल्म में लोकविश्वास केवल पृष्ठभूमि नहीं हैं, कथानक की आत्मा भी हैं। धरती माता, वर्षा देवता, नदी-संस्कृति, विवाह-संस्कार, ऋतु-उत्सव और देवी-पूजन जैसे लोकविश्वास गीतों के माध्यम से अत्यंत प्रभावी ढंग से प्रदर्शित होते हैं। इन गीतों में लोकमान्यताएँ, सामूहिक चेतना और सांस्कृतिक निरंतरता साथ साथ प्रकट होती हैं।

भारतीय जनजातीय चित्रण:

प्रारंभिक प्रयास:

सुजाता (1959) जैसी फिल्मों में अस्पृश्यता और जनजातीय संदर्भ आते हैं।

कथानक और सामाजिक पृष्ठभूमि:

रजतपट की नायिका सुजाता एक ऐसी बालिका है, जिसे ब्राह्मण परिवार गोद तो लेता है, परंतु समाज के जातिगत लोकविश्वासों के कारण उसे पूर्ण स्वीकृति नहीं मिल पाती। यहीं से चल चित्र अस्पृश्यता, सामाजिक भय और लोकधारणाओं को उजागर करना आरंभ करता है। यह लोकविश्वास कि “निचली जाति/वनवासी मूल का व्यक्ति अशुद्ध होता है” — पूरे कथानक का केंद्र बिन्दु बनता है।



अस्पृश्यता का चित्रण: प्रमुख उदाहरण

घरेलू जीवन में भी भेदभाव:

सुजाता को घर में स्थान तो दिया जाता है, परंतु पूजा-स्थल से तटस्थ रखा जाता है, रसोई और जलपात्र को लेकर संकोच दिखाया जाता है, समाज के सामने उसे बेटी कहने में हिचक महसूस होती है, यह उदाहरण दर्शाता है कि अस्पृश्यता केवल बाहरी समाज में नहीं, बल्कि घर के भीतर पनपने वाला लोकविश्वास है।

विवाह का प्रसंग:

सुजाता के विवाह की बात आती है, तब उसकी जाति/मूल को लेकर भय उत्पन्न होता है। यहीं फिल्म यह प्रश्न खड़ा करती है, 'क्या संस्कार बड़ा है या जन्म?' यह प्रसंग लोकमानस में गहरे बैठे शुद्ध-अशुद्ध, ऊँच-नीच के अंधविश्वासों को तोड़ने का प्रयास करता है।

आदिवासी/वनवासी संदर्भ:

सुजाता विशुद्ध आदिवासी फिल्म नहीं है, फिर भी इसमें वनवासी/हाशिये के समाज का संकेतात्मक चित्रण मिलता है, सुजाता-फिल्म में संकेत मिलता है कि सुजाता ऐसे समुदाय से आती है जिसे समाज अस्पृश्य, वनवासी, निम्न मानता है। उसका बीता समय अस्पष्ट रखा गया है-जो भारतीय समाज में जनजातीय /हाशिये के समुदायों की अदृश्यता का प्रतीक है। यह सिनेमा ई रणनीति बताती है कि समाज वनवासी पहचान को या तो छुपाता है या लज्जा से देखता है।

प्रकृति संवेदना:

सुजाता का स्वभाव कोमल, करुणामय और प्रकृति-प्रिय प्रदर्शित किया गया है। वह पेड़ पौधों, बच्चों, रोगियों और पीड़ितों से अपना जुड़ाव रखती है। यह गुण आदिवासी जीवन के उस लोकविश्वास से जुड़ते हैं जहाँ प्रकृति और मानव के बीच नैसर्गिक संबंध माना जाता है।

गीतों से सामाजिक और लोकभाव:

फिल्म के गीत सुजाता की अंतरात्मा और सामाजिक दर्द को स्वर देते हैं। उदाहरणात्मक विश्लेषण: एक प्रसिद्ध भक्ति-प्रधान गीत में सुजाता ईश से प्रश्न करती है-क्या मनुष्य द्वारा बनाई गई दीवारें तुम्हें भी स्वीकार हैं?

एक अन्य गीत में उसका अकेलापन, गंभीर मौन पीड़ा और आत्मगौरव उभरता है। गीत- ईश्वर सबका है, करुणा सबसे बड़ा धर्म है, को सशक्त करता है और जातिगत मान्यताओं को भी चुनौती देता है। फिल्म का वैचारिक महत्व- सुजाता का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उसने अस्पृश्यता को नैतिक अपराध के रूप में दिखाया गया है। लोकविश्वासों की मानवीय परीक्षा ली और यह स्थापित किया कि मनुष्यता जन्म से नहीं, कर्म और करुणा से तय होती है। इस दृष्टि से यह फिल्म आगे चलकर- अंकुर, दो बीघा ज़मीन, आक्रोश, न्यूटन, जय भीम, जैसी यथार्थवादी और जनपक्षधर फिल्मों की वैचारिक पूर्वपीठिका बनती है।

बिमल रॉय निर्देशित सुजाता (1959) हिन्दी फिल्म की उन प्रारंभिक फिल्मों में है, जिसने अस्पृश्यता को केवल सामाजिक समस्या नहीं, बल्कि लोकमानस में रचे-बसे विश्वासों के रूप में प्रस्तुत किया। सुजाता का चरित्र उस हाशिये के समाज का प्रतीक है, जिसे भारतीय व्यवस्था ने अपनाया तो है, पर स्वीकार नहीं किया। फिल्म में घरेलू व्यवहार, विवाह प्रसंग



और गीतों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि फिल्म ने पहली बार करुणा और विवेक के स्तर पर जाति और जनजातीय संदर्भों को चुनौती दी। जंगल बुक आधारित फिल्मों में प्रकृति और जनजातीय जीवन को रोमानी रूप में प्रस्तुत करती हैं।

यथार्थवादी सिनेमा:

आरण्येय दिन रात्रि (सत्यजीत रे), जंगल (रामगोपाल वर्मा), चक्रव्यूह, न्यूटन, जय भीम (तमिल) जैसी फिल्मों में जनजातीय समाज, विस्थापन, शोषण और सत्ता-संघर्ष का यथार्थ रूप दिखाई देता है।

(चयनित पिकचरों के उदाहरणों के माध्यम से)

भारतीय यथार्थवादी फिल्म ने जनजातीय समाज को रोमानी या सजावटी रूप में नहीं, बल्कि संघर्षशील, शोषित और ऐतिहासिक परिस्थितियों से जूझते समुदाय के रूप में प्रेषित किया है। आरण्येय दिन रात्रि, जंगल, चक्रव्यूह, न्यूटन और जय भीम जैसी फिल्मों में इस प्रवृत्ति के सशक्त हस्ताक्षर हैं।

आरण्येय दिन रात्रि (1970, सत्यजीत रे):

यथार्थवादी चित्रण:

यह पिकचर प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्ष नहीं, -शहरी दृष्टि और आदिवासी जीवन के मध्य टकराव को दिखाती है।

प्रमुख उदाहरण

चार शहरी युवा जंगल में आते हैं और जनजातीय नारी को मनोरंजन की वस्तु समझते हैं। एक आदिवासी युवक का अपमान और उसके मौन प्रतिरोध का दृश्य प्रदर्शित होता है। यहाँ वनवासी समाज को भोला, प्रकृति-सम्बद्ध, परंतु शहरी अहंकार से पीड़ित दिखाया गया है। यथार्थ यह है कि वनवासी जीवन स्वयं नहीं बोलता — उस पर दूसरों की दृष्टि आरोपित की जाती है।

यथार्थवादी तत्व: सांस्कृतिक टकराव, मौन शोषण, अदृश्य पीड़ा

“जंगल” (2000, रामगोपाल वर्मा):

यथार्थवादी चित्रण

यह फिल्म वनवासी अंचलों में फैले राज्य-सत्ता, पुलिस और सशस्त्र विद्रोह के त्रिकोण को दिखाती है।

प्रमुख उदाहरण:

वनवासियों को पुलिस द्वारा बिना अपराध के पकड़ना, गाँवों पर आतंक करना, विस्थापन और जंगल में जीवन व्यतीत करने पर मजबूर करना, यहाँ आदिवासी नायक नहीं, बल्कि दो शक्तियों के बीच पिसता समुदाय है।

यथार्थवादी तत्व: पुलिस अत्याचार, भय, जंगल का असुरक्षित होना, सत्ता का दमन

चक्रव्यूह (2012, प्रकाश झा):

यथार्थवादी चित्रण

यह फिल्म नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में जनजातीय समाज की राजनीतिक उपयोगिता को उजागर करती है।

प्रमुख उदाहरण:

खदान कंपनियों का भूमि हड़पना, वन वासी युवाओं को हथियारबंद संघर्ष में झोंक देना, विकास बनाम विस्थापन की बहस, आदिवासी यहाँ संघर्ष का कारण भी हैं और शिकार भी। स्पष्ट होता है।

यथार्थवादी तत्व: जल-जंगल-जमीन, राजनीतिक शोषण, विचारधारात्मक द्वंद्व।

न्यूटन (2017, अमित वी. मसूरकर):

यथार्थवादी चित्रण

यह फिल्म लोकतंत्र की प्रक्रिया के भीतर जनजातीय समाज की अदृश्यता को सामने लाती है।

प्रमुख उदाहरण:



बंदूक की निगरानी में मतदान, आदिवासियों का यह न जानना कि वोट क्या होता है, भय और अविश्वास का वातावरण बनाना, यहाँ आदिवासी शोषित ही नहीं, अपितु लोकतांत्रिक व्यवस्था से काट दिए गए नागरिक हैं।

यथार्थवादी तत्व: राजनीतिक उपेक्षा, प्रतीकात्मक लोकतंत्र, सांस्कृतिक दूरी

जय भीम (2021, तमिल):

यथार्थवादी चित्रण:

यह फिल्म आदिवासी समुदाय पर होने वाले राज्य-प्रायोजित अत्याचार का सशक्त अभिलेख है।

प्रमुख उदाहरण:

निर्दोष आदिवासी का पुलिस हिरासत में बर्बरता, नारी का न्याय के लिए संघर्ष, कानूनी दाव पेच की वर्गीय संरचना, यहाँ आदिवासी समाज केवल सांस्कृतिक नहीं, -संवैधानिक प्रश्न बन जाता है।

यथार्थवादी तत्व: हिरासत हिंसा, कानूनी संघर्ष, मानवाधिकार तुलनात्मक निष्कर्ष

इन सभी फिल्मों में आदिवासी समाज को: प्रकृति-पुत्र (आरण्येर दिन रात्रि), सत्ता-पीड़ित (जंगल), राजनीतिक मोहरा (चक्रव्यूह), लोकतंत्र से वंचित नागरिक (न्यूटन), और न्याय-संघर्षरत मानव (जय भीम) के रूप में प्रस्तुत किया गया है। ये सभी यथार्थवादी फिल्में आदिवासी जीवन को नायकत्व नहीं, बल्कि यथार्थ की पीड़ा देती हैं।

यथार्थवादी भारतीय फिल्म में आदिवासी समाज सौंदर्य या रोमानीकरण का विषय नहीं, सत्ता-संरचना में फँसे समुदाय का यथार्थ दस्तावेज़ बनता है। आरण्येर दिन रात्रि सांस्कृतिक शोषण को, जंगल राज्य आतंक को, चक्रव्यूह राजनीतिक उपयोगिता को, न्यूटन लोकतांत्रिक विडंबना को और जय भीम संवैधानिक संघर्ष को उजागर करती है। इन

फिल्मों में आदिवासी समाज का चित्रण आंशिक होते हुए भी अपने यथार्थ में तीखा और विचारोत्तेजक है।

समस्या-केन्द्रित दृष्टि:

समस्त फिल्मों में जल-जंगल-जमीन, खनन, पुलिस दमन, और सांस्कृतिक विघटन जैसे मुद्दे सामने आते हैं। इससे फिल्म केवल मनोरंजन नहीं, जनजातीय विमर्श का मंच बन जाती है।

(फिल्मी उदाहरणों के माध्यम से सौदाहरण प्रस्तुति)

भारतीय यथार्थवादी फिल्म में वनवासी समाज से जुड़े प्रश्न—जल, जंगल, जमीन, खनन, पुलिस दमन और सांस्कृतिक विघटन—केवल पृष्ठभूमि नहीं रहते, बल्कि कथानक के केंद्र बिन्दु बन जाते हैं। इस प्रक्रिया में फिल्म मनोरंजन से आगे बढ़कर जनजातीय विमर्श के मंच के रूप में बदल जाती है।

जल-जंगल-जमीन पर प्रश्न

चक्रव्यूह (2012):

इस फिल्म में बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा खदान हेतु जंगलों पर कब्ज़ा, गाँवों का विस्थापन और आदिवासियों से उनकी जमीन छीने जाने के दृश्य हैं। जंगल यहाँ केवल भौगोलिक क्षेत्र नहीं, अस्तित्व का आधार है।

जंगल (2000):

वनवासी अंचल को संघर्ष क्षेत्र के रूप में दिखाया गया है, जहाँ जंगल ही जीवन, शरण और भय—तीनों हैं।

यथार्थवादी निष्कर्ष: जल-जंगल-जमीन आदिवासी समाज के लिए संपत्ति नहीं, पहचान है।



खदान और विस्थापन:

चक्रव्यूह:

खनन कंपनियाँ विकास के नाम पर पर्वत, जंगल और ग्राम नष्ट करती हैं, वनवासी युवा या तो विस्थापित होते हैं या हथियारबंद संघर्ष में धकेल दिए जाते हैं।

न्यूटन (2017):

खनन प्रत्यक्ष नहीं, पर उसका परिणाम—सुरक्षा बल, उजड़ा समाज और भयग्रस्त जीवन पूरे वातावरण में फैला हुआ है।

यथार्थवादी निष्कर्ष: फिल्म खनन को “विकास” नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विध्वंस के रूप में प्रस्तुत करता है।

पुलिस दमन द्वारा हिंसा:

जंगल:

निरपराध आदिवासियों को विद्रोही समझकर पकड़ना, यातनाएँ देना और गाँवों को आतंकित करना।

जय भीम (2021):

बंधक आदिवासी युवक पर अत्याचार, झूठे मुकदमे और न्याय-व्यवस्था की वर्गीय मानसिकता। यहाँ पुलिस व्यवस्था रक्षक नहीं, भक्षक प्रतीत होती है।

यथार्थवादी निष्कर्ष: फिल्म राज्य हिंसा को उजागर कर आदिवासी जीवन को संवैधानिक प्रश्न बनाती है।

सांस्कृतिक विघटन और अस्मिता संकट:

आरण्येय दिन रात्रि (1970):

शहरी युवकों द्वारा आदिवासी जीवन को “मनोरंजन” की वस्तु समझना, आदिवासी स्त्री का अपमान— सांस्कृतिक उपनिवेशवाद का संकेत करता है।

न्यूटन: आदिवासियों का लोकतंत्र, भाषा और अधिकारों से अपरिचित होना। यह सांस्कृतिक कटाव की ओर इशारा करता है।

यथार्थवादी निष्कर्ष: आदिवासी संकट केवल आर्थिक नहीं, सांस्कृतिक भी है।

चक्रव्यूह और जंगल जल-जंगल-जमीन और खनन के माध्यम से विस्थापन की त्रासदी को सामने लाती हैं; जय भीम पुलिस दमन और कानूनी असमानता को उजागर करती है; आरण्येय दिन रात्रि सांस्कृतिक शोषण को और न्यूटन लोकतांत्रिक विडंबना को रेखांकित करती है। स्पष्ट है कि भारतीय फिल्म अब केवल कथा नहीं, बल्कि जनजातीय समाज के अस्तित्व, अधिकार और अस्मिता पर विमर्श का मंच बन चुका है।

फिल्म में लोक यथार्थ बनाम रोमानीकरण:

यह भी अवलोकनीय है कि जहाँ एक ओर सिनेमा लोकसंस्कृति को जीवित रखता है, वहीं दूसरी ओर उसे अत्यधिक नृत्यात्मक, रहस्यमय, या केवल सजावटी तत्व के रूप में प्रदर्शित करता है। इससे वास्तविक संघर्ष, श्रम, दर्शन और सामाजिक संरचना पृष्ठभूमि में चली जाती है। यह मेरा मानना है कि अब भारतीय फिल्म को सजावट से आगे बढ़कर संवेदनात्मक और सहभागी दृष्टि अपनानी चाहिए।

निष्कर्ष:

भारतीय फिल्म में जनजातीय एवं लोकसंस्कृति का चित्रण एक वृत्तांत रहा है — लोकगीतों की मधुरता से लेकर जनसंघर्षों की तीव्रता तक। फिल्म ने लोकसंस्कृति को लोकप्रियता और प्रसिद्धि दी, किन्तु जनजातीय समाज को अक्सर या तो हाशिये पर रखा या रूमनियत में ढक दिया। समकालीन फिल्म में यह परिस्थिति बदली है, जहाँ जनजातीय जीवन को उनकी अस्मिता, अधिकार और दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है। यही दिशा भारतीय फिल्म को सांस्कृतिक रूप से अधिक ईमानदार बनाती है।



संदर्भ सूची:

- | | |
|---------------------------|--------------------------|
| 1. नदिया के पार सिनेमा से | 9. मदर इंडिया से |
| 2. नदिया के पार सिनेमा से | 10. मदर इंडिया से |
| 3. नदिया के पार सिनेमा से | 11. नदिया के पार से |
| 4. गंगा जमुना फिल्म से | 12. नदिया के पार से |
| 5. मदर इंडिया फिल्म से | 13. लगान से |
| 6. लगान फिल्म से | 14. लगान से |
| 7. पीके फिल्म से | 15. पद्मावत फिल्म से |
| 8. पद्मावत फिल्म से | 16. गंगा जमुना सिनेमा से |
| | 17. सुजाता फिल्म से |